SSN: 2456–4397 RNI No.UPBIL/2016/68067 Vol-6* Issue-10* January-2022
Anthology : The Research

वैदिक दृष्टिकोण में श्रद्धा-विमर्श

Shraddha in the Vedic Perspective

Paper Id: 15617, Submission Date: 10/01/2022, Date of Acceptance: 18/01/2022, Date of Publication: 24/01/2022

कामना विमल शर्मा
सहायक प्रवक्ता,
संस्कृत विभाग,
दौलतराम महाविद्यालय
दिल्ली विश्वविद्यालय,
दिल्ली, भारत

सारांश

वेदोखिलो धर्ममूलम् और इस वैदिक धर्म के मूलाधार हैं श्रद्धा और तर्क। वेदोक्त धर्म को समझने के लिए श्रद्धापूर्ण आस्तिक्य बुद्धि अपरिहार्य है - **श्रत् सत्यं दधाति यथेच्छया सा श्रद्धा** अर्थात् जिससे मनुष्य सत्य को धारण करता है, उस इच्छा को श्रद्धा कहते हैं। वैदिक मन्त्रों और भाष्यों से श्रद्धा का सत्य से घनिष्ठ संबंध सिद्ध है परन्तु इस भारतीय आस्तिक्यबुद्धि की सत्यप्रतिबद्धता से अपरिचित पाश्चात्य विद्वान् एवं कुछ भारतीय विचारक इसे कट्टरता अथवा अन्धविश्वास का नाम देते हैं। पाश्चात्य दृष्टिकोण में, श्रद्धा अर्थात् विश्वास धर्म का विषय है और तर्क अर्थात् प्रमाणों द्वारा पुष्टिकरण विज्ञान का। जहाँ धर्म हो, वहां तर्क अपेक्षित नहीं और विज्ञान के क्षेत्र में श्रद्धापूर्ण दृष्टिकोण बाधक होगा। पाश्चात्य सन्दर्भ में इस तर्कविहीन श्रद्धा ने धर्म को संकीर्ण, अपरिवर्तनीय, सर्वथा अनुकरणीय, असन्दिग्ध एवं अनुत्तरदायी बना दिया। वैज्ञानिक दृष्टिकोण के युक्त सुकरात, गैलेलिओ जैसे विचारकों के मतों को इसने विरोध के रूप में लिया और दबाने का प्रयास किया। वहीँ से पाश्चात्य मान्यता कि श्रद्धा और तर्क परस्पर विरोधी है, ने जन्म लिया। पाश्चात्य अंधानुकरण की प्रवृति ने हम भारतीयों को भी अपने श्रद्धा और तर्क सम्मत धर्म पर अविश्वास करने के लिए प्रेरित किया।

वैदिक दृष्टिकोण में श्रद्धा और तर्क परस्पर विरोधी नहीं वरन् पूरक हैं। वेदों में दोनों का ही महत्त्व समान रूप से प्रतिपादित हैं और वैदिक ऋषि श्रद्धा-मेधा के समन्वित रूप के लिए प्रार्थना करता है - **अग्ने समिधमाहार्षं बृहते जातवेदसे, स मे श्रद्धां च मेधाम च जातवेदाः प्रयच्छतु।** सच्ची श्रद्धा ही सत्य प्राप्ति अर्थात् सच्चे सुख और आनंद की प्राप्ति का एकमात्र मार्ग है। यह श्रद्धा जिज्ञासाओं को प्रेरित करके मानव को सूक्ष्म तथा बृहत सत्य की खोज में लगाती है। अध्यात्म विद्या का गौरव यह श्रद्धा मानव में अपने क्रियात्मक बुद्धि अथवा तर्क रूप में प्रवृत होती है। इस बुद्धि का वेदों में विज्ञानवती यथार्थ धारणावती शुद्ध बुद्धि के रूप में वर्णन किया गया है।

Vedakhilo Dharmamoolam - And the foundations of this Vedic religion are *Shraddha* and *tarka* . To understand the Vedokta *Dharma*, reverent theistic intelligence is indispensable - *srat satyam dadati yathechhaya sa shraddha*, that is, the desire by which a person imbibes truth is called *shraddha*. The close relation of faith with truth is proved from Vedic mantras and commentaries. But western scholars and some Indian thinkers, unfamiliar with the true commitment of this Indian belief, give it the name of bigotry or superstition. In the western view, Reverence is a matter of religion and logic meaning confirmation by evidence is a matter of science. Where there is religion, logic is not required and a reverent approach in the field of science will be a hindrance. This irrational belief in the western context has made religion narrow, unchanging, completely exemplary, unquestionable and unresponsive. It took the views of thinkers like Socrates, Galileo with a scientific approach as opposition and tried to suppress it. From there the Western belief that faith and logic are contradictory, took birth. The tendency of blind imitation of western also inspired us Indians to distrust our faith and logical religion.

In the Vedic view, *Shraddha (Reverence)* and tarka (reasoning) are not contradictory but complementary. The importance of both is equally expounded in the Vedas and the Vedic sage prays for a syncretic form of *Shraddha-Medha - Agne samidhamahāram brihte jatvedase, sa me shradhan cha medham cha jatvedah prayachhatu*. True reverence is the only way to attain truth, that is, to attain true happiness and bliss. This reverence inspires curiosity and engages man in the search of subtle and greater truth, Pride of Spirituality This faith is inculcated in human beings in their functional intellect or reasoning form. This intellect has been described in the Vedas as ViJnanavati Reality Dharanavati Pure Wisdom.

मुख्य शब्द: श्रद्धा, तर्क, वेद, जिज्ञासा, बुद्धि, विज्ञान।
Keywords: Faith, Logic, Vedas, Inquisition, Intelligence, Science.

प्रस्तावना

श्रद्धा एवं तर्क को सामान्यतः परस्पर विरोधी माना जाता है पर एक के अभाव को दर्शाने के लिए दूसरे का आश्रय लिया जाता है। दोनों के विषय एवं क्षेत्र भी भिन्न-भिन्न बताए जाते हैं। जहां धर्म को श्रद्धा का विषय बताकर तर्क की उपस्थिति को अवांछनीय बताया जाता है वहीं विज्ञान को विशुद्ध तर्क का क्षेत्र माना जाता है जहां श्रद्धा बाधक होगी। वस्तुतः यह श्रद्धा और तर्क के विरोध की मान्यता भारत में अज्ञान एवं पाश्चात्य अंधानुकरण की प्रवृत्ति के कारण प्रचलित हुई। वर्षों तक विदेशी प्रभाव में रहने के कारण भारतीयों ने जहां एक और अपने ज्ञान के स्रोतों वेदादि शास्त्रों के ज्ञान को विस्मृत कर दिया वहीं दूसरी ओर शासक एवं समृद्ध वर्ग के अनुकरण की प्रवृत्ति के कारण पाश्चात्य धर्म संस्कृति विचार भाषा एवं मान्यताओं को स्वीकार करने लगे। परिणामस्वरूप जो बौद्धिक एवं वैचारिक समस्याएं वस्तुतः भारतीय संस्कृति में है ही नहीं उनसे भ्रमित होने लगे। स्वयं भ्रमित होते हुए पश्चिमी विद्वानों की भांति ही अपनी स्थिति के लिए भारतीय संस्कृति को दोष देने लगे जिसमें जीवन को दिग्भ्रमित करने वाला श्रद्धा तर्क विरोध कभी था ही नहीं।

पश्चिमी देशों में एक ही धर्म था और वह भी राजकीय धर्म। वहां उस धर्म ने राज व्यवस्था और न्याय व्यवस्था को इतना प्रभावित किया कि चर्च ने कट्टर रूप धारण कर लिया। चर्च के कार्यों में, धार्मिक रचनाओं पर किसी भी प्रकार के संदेह की, प्रश्न की अनुमति न थी। केवल श्रद्धा ही अभीष्ट थी। तर्क को धर्म के क्षेत्र में कोई स्थान न रहा। इस कारण ही धार्मिक असहिष्णुता और अंधश्रद्धा ने जन्म ले लिया। संकीर्णताओं और बाध्यताओं से जूझते मानवो ने इसके विरुद्ध विद्रोह कर दिया। चर्च के अधिकारों को कम करने के साथ ही उन्होंने श्रद्धा को भी अस्वीकार कर के उसके स्थान पर तर्क को स्वीकार किया अर्थात प्रमाणों के द्वारा परीक्षण, जीवन का नवीन सिद्धांत बन गया। निस्संदेह शुष्क तर्क की प्रधानता के कारण पाश्चात्य देशों के निवासी अब आध्यात्मिकता के प्रश्नों का सामना करने लगे। इस प्रकार पाश्चात्य देशों में श्रद्धा एवं तर्क के मध्य संघर्ष चलता रहा है।

परंतु भारतीय संदर्भ में यह विरोध अर्थहीन है। भारतीय सनातन धर्म के कोष स्वरूप वैदिक धर्म में विज्ञान अंग रूप में विद्यमान है। यही कारण है कि वैदिक परंपरा में विज्ञान एवं आध्यात्म परस्पर संयुक्त है न कि पृथक शाखा के रूप में। विश्व की अद्यतन वैज्ञानिक खोजों को आज से हजारों वर्षों पूर्व उनके सत्य रूप में जानकर चाहे वह गणित शास्त्र हो या शल्यक्रिया, रसायन विद्या हो अथवा भौतिक शास्त्र, उनसे संपूर्ण विश्व को लाभान्वित करने वाले वैदिक धर्म में श्रद्धा और तर्क जितना धर्म के लिए आवश्यक है उतना ही विज्ञान के लिए भी। वैदिक काल में माननीय जीवन श्रद्धा एवं तर्क के समन्वित रूप से प्रेरित एवं प्रोत्साहित होता था। आइंस्टाइन ने विज्ञान और धर्म के संबंध को बताते हुए कहा है कि धर्म के बिना विज्ञान पंगु है और विज्ञान के बिना अंधा है। वैदिक ऋषि ज्ञान को अंधश्रद्धा का विषय नहीं मानते जहां प्रश्न के लिए स्थान न हो। प्रश्नोत्तर शैली वैदिक ज्ञान परंपरा की विशिष्टता है जहां गुरु शिष्य परंपरा में शिष्य अत्यंत श्रद्धा पूर्वक तत्वज्ञान की इच्छा से गुरु से प्रश्न पूछता है और गुरु के द्वारा प्रदत तथा शास्त्रों में वर्णित ज्ञान हो स्वयं तर्कों द्वारा अनु प्रमाणित करता है। ऐसा वह ज्ञान स्वतः ही उस शिष्य का अपना दर्शन अथवा दृष्टिकोण बन जाता है।

वैदिक ज्ञान के चरम औपनिषदिक धर्म की प्रवृत्ति है ज्वलंत श्रद्धा के साथ संदेह होना, निर्भीक प्रश्नकर्ता मन, और सत्य की खोज के लिए श्रद्धा द्वारा प्रेरित बुद्धि, स्वयं पर विश्वास पर, कल्याण की भावना से ज्ञात का उपदेश। श्रद्धा संदेह का गला नहीं घोटती वरन संदेह युक्त बुद्धि को सत्यान्वेषण के लिए सन्मार्ग पर प्रेरित करती है और पथ प्रदर्शन करती है।

लौकिक आध्यात्मिक ज्ञान की प्रत्येक शाखा में जिसका लक्ष्य व्यक्त से व्यक्त की यात्रा हो ऋषियों ने जिज्ञासा को प्रेरित किया है। जिज्ञासा वस्तुतः श्रद्धा द्वारा प्रेरित तर्क की आकांक्षा है जो श्रद्धा के विषय को बुद्धि का विषय बनाती है। इस प्रकार वैदिक जिज्ञासाओं में श्रद्धा और बुद्धि का उच्च स्थान रहा है। शंकराचार्य के गुरु गौड़पाद मांडूक्योपनिषद में उस वैदिक दर्शन की वंदना करते हैं जो आंतरिक जगत (अध्यात्म अर्थात तथाकथित श्रद्धा का विषय) और बाह्य जगत (विज्ञान अर्थात तथाकथित तर्क का विषय) दोनों के सत्य का अन्वेषण करता है तथा विवादों और विरोधों (श्रद्धा तर्क विरोधिता अथवा श्रेष्ठता संबंधी विवाद) से मुक्त है-

अस्पर्शयोगो वै नाम सर्वसत्त्वसुखोहितः।
अविवादो अविरूद्धश्च देशितः तं नमाम्यहम्॥

अध्ययन का उद्देश्य

भारतीय श्रद्धापूर्ण आस्तिक्य बुद्धि सत्य, तर्क एवं विज्ञान पर आधारित है और इस शोध पत्र का उद्देश्य वेदों में श्रद्धा के स्वरूप को प्रकाशित करना है।

श्रद्धा शब्द का अर्थ एवं वेदों में श्रद्धा का महत्व

श्रद्धा शब्द श्रत और धा से जुड़ कर बना है। श्रत का अर्थ है सत्य (निघण्टु) धा धातु का अर्थ है भरण पोषण करना। अतः श्रद्धा का अर्थ है सत्य को धारण करना और उसे परिपुष्ट करना या प्रबल बनाना - **श्रतं सत्यम् दधाति यथेच्छया सा श्रद्धा** - अर्थात मनुष्य जिस इच्छा से सत्य को धारण करता है, वह श्रद्धा है। आचार्य दयानन्द के अनुसार सत्य धारण में प्रीति और सत्य धार्मिक जनों में प्रीति ही श्रद्धा है। यजुर्वेद के मंत्र –

व्रतेन दीक्षामाप्नोति दीक्षयाप्नोति दक्षिणाम्।
दक्षिणा श्रद्धामाप्नोति श्रद्धया सत्यमाप्यते॥

पर महीधर भाष्य में कहते हैं –

श्रतं सत्यम् धीयते यस्याम् सा श्रद्धा आस्तिक्यबुद्धिः पुण्यवेताम् मनोविशेषः।

अर्थात जिसमे सत्य स्थापित किया जाता है ऐसी आस्तिक्यबुद्धि जो पुण्यकारियों की विशेष मनोविशेष या मनोवृत्ति है।

श्रद्धा के बिना आत्मसाक्षात्कार संभव नहीं। यह अध्यात्म का प्रथम सोपान है। श्रद्धा का फलक विस्तृत है। इसके अंतर्गत स्वयं पर श्रद्धा, जीव मात्र में श्रद्धा, संसार में श्रद्धा. प्रभु में श्रद्धा, संपूर्ण अस्तित्व में श्रद्धा सम्मिलित है। श्रद्धा प्रेमभाव का विकास है। यह भेदभाव से दूर अपने साथ-साथ दूसरों की आस्था का भी सम्मान करने वाली है। विश्व शांति हेतु श्रद्धा आवश्यक है। यह संकीर्णताओं से परे है।

श्रद्धा का सत्य से घनिष्ठ संबंध है। यही कारण है कि सत्य को धारण करने की इच्छा, सत्य को धारण करने की क्रिया, सत्य और सत्य वादियों में प्रीति और दृढ़ विश्वास सत्य को दृढ़ता पूर्वक धारण करना और बड़ी से बड़ी आपति या प्रलोभन आने पर भी विचलित न होना यही सच्ची श्रद्धा है। ऋग्वेद का श्रद्धा सूक्त जिसमे श्रद्धा का अत्यंत महिमामय वर्णन किया गया है और ऋषिका भी श्रद्धा नाम से विख्यात है, के अनुसार श्रद्धा ज्ञानाग्नि अथवा आत्माग्नि की प्रदीपिका है **श्रद्धया समिध्यते आत्मैवाग्नि**/ गीता भी ज्ञान प्राप्ति के लिए श्रद्धा को अनिवार्य मानती है - **श्रद्धावान लभते ज्ञानम्** - श्रद्धालुओं को ही ज्ञान की प्राप्ति होती है। सामवेद में श्रद्धा का माता रूप में प्रतिपादन किया गया है। **श्रद्धा मातामनुः कविः** - क्रांतदर्शी तत्वदर्शी श्रद्धा माता का अनुसरण करता है अर्थात श्रद्धा तत्वज्ञान के मार्ग पर प्रेरित करती है। वेदों में श्रद्धा की महिमा बताई गई है वह अंधश्रद्धा न होकर प्रत्यक्षादि प्रमाणों से अर्थात तर्क द्वारा परीक्षित अतः सत्य निष्ठ है। वह सत्य धर्म में प्रीति, सत्य धारण की क्रिया, इच्छा व बुद्धि है। सत्य निष्ठा के कारण इसका तक विहीन होना सर्वदा असंभव है।

वेदों में तर्क का अर्थ व महत्व ऋग्वेद में शुद्ध बुद्धि की प्रार्थना की गई है। ऋग्वेद में उत्तम बुद्धि विषयक प्रार्थना की गई है। वेदों में तर्क का मेधा के रूप में चित्रण किया गया है जिसका अर्थ बताते हुए उसे विज्ञानवती यथार्थ धारणा वती बुद्धि कहा गया है। यह सत्यासत्य, धर्माधर्म, पाप पुण्य, कर्तव्याकर्तव्य का विवेचन करने वाली तर्क बुद्धि होती है जो श्रद्धा का आधार और उसको बढ़ाने वाली है। अथर्ववेद में - **मेधामहं प्रथमां ब्रह्मणवतीम** - में इसे प्रथमा बुद्धि कहने से इसे सभी बुद्धियों में श्रेष्ठ अथवा प्रथम कहा गया। साथ ही ब्रह्मणवती की उपाधि इसका वेदाधारित होना सिद्ध करती है। सत्य से प्रकाशमान सभी विद्वानों, शिल्पियों, ऋषियों और योगियों के द्वारा सेवित इस कल्याणकारी शुद्ध बुद्धि को हम अपने अंतर में सदा धारण करें यह प्रार्थना इस मंत्र में की गई है –

यां मेधामृभवो विदुर्यां मेधामसुराः विदुः।
ऋषयोः भद्राम् मेधाम् या विदुस्तां मय्या वेशयामसि।

अथर्ववेद में देवी प्रमति के रूप में इसी प्रकृष्ट, सूक्ष्म और तीव्र बुद्धि की प्रार्थना की गई है जो कार्य आरंभ करने के लिए आवश्यक है। ऋग्वेद में तो श्रद्धा का गौरव और महत्व का विस्तारपूर्वक वर्णन है। श्रद्धा अभीष्ट फलदात्री, वैभव की अधिष्ठात्री है –

श्रद्धां देवा यजमाना वायुगोपा उपासते।
श्रद्धा हृदययाकूत्या श्रद्धया विन्दते वसु॥

गीता में प्रकाशवान निर्माणात्मक और क्रियाशील बुद्धि को मानव जीवन के लिए आवश्यक बताते हुए कहा गया है - *बुद्धौ शरणम् अन्विच्छ।*

प्राचीन भारतीय दर्शन व शास्त्रों में तर्क शास्त्रीय प्रक्रिया का एक अभिन्न अंग है

श्रद्धा तर्क बुद्धि समन्वय

भारतीय दृष्टिकोण में अथवा वैदिक दृष्टिकोण में श्रद्धा एवं तर्क के विरोध का अभाव है। मानव जीवन के लिए दोनों की अनिवार्यता है तथा श्रद्धा और तर्क परस्पर आत्मनिर्भर अथवा आश्रित हैं। यह परस्पर पूरक एवं एक दूसरे के लिए प्रेरक हैं। ऋग्वेद में छुरी की धार सी तेज बुद्धि की प्रार्थना की गई है। साथ ही समान मंत्र में ही दिव्य गुणों से युक्त भक्त बनाने की प्रार्थना प्राप्त होती है- यह वैदिक दर्शन का उदाहरण है जिसमें श्रद्धा और तर्क बुद्धि में कोई विरोधाभास नहीं है। बुद्धि को तेज, पवित्र, सूक्ष्म व विकसित करने की प्रार्थना की गई है ताकि सत्यासत्य का यथार्थ ज्ञान प्राप्त कर सकें। अथर्ववेद में श्रद्धा और मेधा दोनों के समन्वय को दर्शाते हुए दोनों के लिए अग्निदेव से प्रार्थना करते हुए कहा गया है –

अग्ने समिधमाहार्षं बृहते जातवेदसे।
स मे श्रद्धां च मेधां च जातवेदाः प्रयच्छतु॥

श्रद्धा विहीन तर्क के दुष्परिणाम श्रद्धा के अभाव को अश्रद्धा कहा जाता है। अश्रद्धा पर आधारित तर्क लक्ष्यहीन वाहन के समान भ्रमित हो जाता है और अपने निष्कर्ष को प्राप्त नहीं कर पाता है। यदि कोई वैज्ञानिक बिना किसी हाइपोथेसिस की स्थापना किए शोध करता है तो संभवत वह निष्कर्ष पर पहुंचने

से पूर्व ही अपने शोध को संपूर्ण मान लेगा अथवा निष्कर्ष प्राप्ति पर पहुंचने के बाद भी उसे स्वीकार नहीं कर सकेगा। यह श्रद्धा विहीन तर्क कुतर्क में परिवर्तित हो जाता है। नकारात्मक प्रवृत्ति के कारण यह संदेह युक्त रहता है तथा दोषदर्शिता की प्रवृति को प्राप्त कर लेता है अर्थात चारों ओर निराशा, अनिष्ट, आशंकाओं और असुरक्षा को देखता है। उसके पास तथ्य होते हैं परंतु जीवन मूल्य नहीं। ऐसे वैज्ञानिक एटम बम और न्यूक्लियर बम जैसे विध्वंसकारी शस्त्रों या यंत्रों की रचना करते हैं। ऐसे व्यक्ति के लिए मानव जीवन का मूल्य नगण्य होता है स्वयं का तथा औरों का भी। यह शुष्क तर्क युक्तिवाद में फंसा रहता है और कर्तृत्व शक्ति तथा निर्माण शक्ति से शून्य होता है।

तर्क विहीन श्रद्धा - इसे अति श्रद्धा या अंधश्रद्धा कहना उचित होगा। यह मानव को अज्ञानी और असहिष्णु बनाती है। अंधश्रद्धा के कारण वह सत्य का अनुकरण नहीं कर पाता और सत्य के अभाव में सत्य निष्ठ श्रद्धा भी उसक त्याग कर देती है। तब अपनी छद्म श्रद्धा को वास्तविक एवं सत्य सिद्ध करने के लिए वह अपने मत की स्थापना और अन्य मतों के खंडन हेतु प्रपंच रचता है और अज्ञान के अंधकार को और अधिक गहरा कर लेता है। इस श्रद्धा को भक्ति का नाम देना उचित नहीं होगा क्योंकि यह अपने श्रद्धेय तक पहुंचने में सफल नहीं हो सकती। भक्ति के लिए ज्ञान को अनिवार्य बताते हुए गीता में कहा गया है - *न हि ज्ञानेन सदृशं*।

गुरु और शास्त्र के वाक्यों के सत्य को तर्क द्वारा प्रमाणित करने को बुद्धिमान लोग श्रद्धा कहते हैं जिससे वस्तु का लाभ होता है अंतर में उपस्थित सत्य का लाभ होता है। यहां सत्य बुद्धि अवधारणा श्रद्धा के लिए तर्क की अनिवार्यता को दर्शाता है। अंधश्रद्धा परंपराओं के रूप में, अंधविश्वासों के रूप में अपना साम्राज्य बनाए रखती है। इसे चमत्कारों की अपेक्षा होती है। सत्य से दूर होने के कारण यह स्वयं भी असत्य होती है। इसमें निर्माण शीलता का अभाव होता है और यह आत्मघाती होती है अर्थात स्वयं अंधश्रद्धावान व्यक्ति का सर्वनाश कर देती है। कुपात्र पर श्रद्धा भी अश्रद्धा का ही अन्य रूप है जिससे व्यक्ति भ्रमित एवं दिशाहीन हो जाता है। वर्तमान समय में स्वघोषित स्वयंभू धर्मगुरुओं पर अत्यंत श्रद्धा के दुष्परिणाम ज्ञात ही हैं। अतः अंधश्रद्धा उचित नहीं है। गीता में कहा गया है अज्ञश्च अश्रद्धानश्च संशयात्मा विनश्यति अर्थात अज्ञानी, श्रद्धा से रहित तथा संशय में पड़ा व्यक्ति सर्वनाश को प्राप्त करता है।

निष्कर्ष

अतः **वैदिक** संस्कृति में प्रतिपादित श्रद्धापूर्ण तर्कशीलबुद्धि सभी वैचारिक एवं धर्मसम्बन्धी विरोधाभासों का निराकरण करने में सक्षम है और वर्तमान समय में विश्व में व्याप्त विभ्रम को दूर करने के लिए अनुकरणीय है। वर्तमान समस्याओं का समाधान वेदों में वर्णित है। यदि वैदिक श्रद्धा तर्क समन्वय पर शिक्षा प्रणाली आधारित हो तो श्रेष्ठ बुद्धि और सच्ची श्रद्धा से समग्र चरित्र निर्माण संभव है विशुद्ध वैदिक दृष्टिकोण से युक्त आस्तिक्य बुद्धि संपन्न मानव ही विश्व की समस्याओं को श्रद्धा-तर्क समन्वय के आधार पर सुलझा सकता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. *मांडूक्योपनिषद 4.2*
2. *यजुर्वेद 19.30*
3. *महीधर (यजुर्वेद 19.30)*
4. *ऋग्वेद 10.151.1-5*
5. *श्रीमद्भगवद्गीता 4.39*
6. *सामवेद 1.9.10*
7. *अथर्ववेद 6.108.2*
8. *अथर्व. 6.108.3*
9. *ऋग्वेद 10.151.3*
10. *श्रीमद्भगवद्गीता 2.49*
11. *शाङ्खायन गृह्यसूत्र 5.68*